RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : MISC-II/CPM/09/KPHO/2014-17
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

मार्च-2017 | वर्ष - 09 | अंक : 02 | मूल्य : 5/-

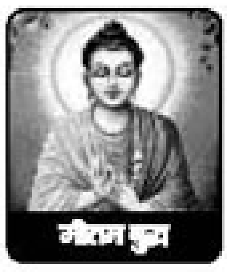
गौतम बुद्ध

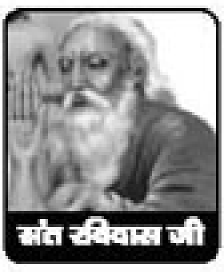
संत रविदास जी

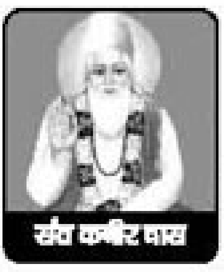
संत कबीर दास

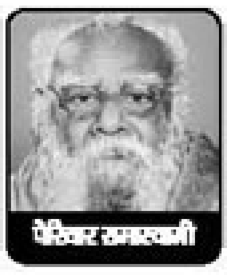
पेरियार रामास्वामी

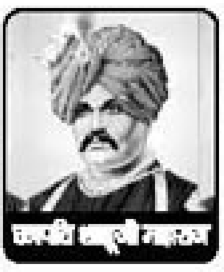
छत्रपति शाहूजी महाराज

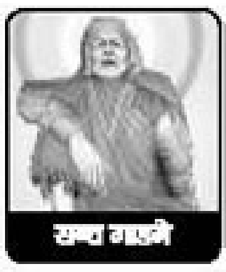
सन्त गाडगे

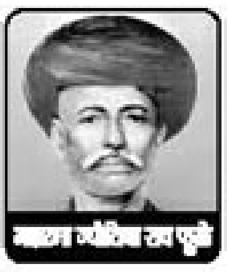
महात्मा ज्योतिबा राव फुले

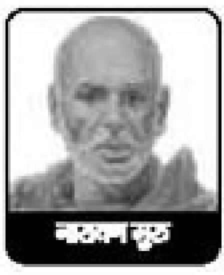
नारायण गुरु

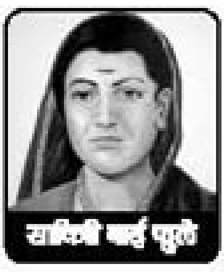
सावित्री बाई फुले

बाबा साहेब डा. अम्बेडकर

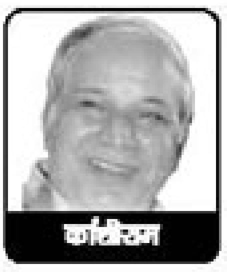
कांशीराम

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (इं. जल संस्थान इलाहाबाद), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश : सुनीता धीमान, 414/12, शास्त्री नगर, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 9450871741
सहायक ब्यूरो चीफ (उ.प्र.) : चन्द्रिका प्रसाद ओमर, 49ए/52-बी, ख्यौरा, आजाद नगर, कानपुर, मो.: 9305256450
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड,
कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख कानपुर मण्डल :
पुष्पेन्द्र गौतम हिन्दुस्तानी, मल्हौसी, औरेया, उ.प्र. मो.: 9456207206
फुरकान खान, मो. : 8081577681
राकेश समुन्द्रे, मो. : 9889727574
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य :
दिलीप कुमार कोसले, मो. : 09424168170
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001,
मो. : 09887512360, 0144-3201516
चिरंजीलाल बैरवा (व्यावस्थापक) मेहरा आदर्श विद्या मन्दिर, भीम नगर कालोनी, राज भट्टा, दिल्ली रोड, अलवर, जिला-अलवर, मो.-09829855349
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-नवीन मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020•IFSC CODE-SBIN005307

ब्राह्मण शाकाहारी क्यों बने?

यह स्पष्ट है कि अब्राह्मणों में एक क्रांति हुई। गो मांसाहार छोड़ देना एक क्रांति ही थी। लेकिन अब्राह्मणों में एक क्रांति हुई तो ब्राह्मणों में दोहरी क्रांति हुई। उन्होंने गोमांस खाना छोड़ा, यह एक क्रांति हुई। मांसाहार स्पर्श त्याग दूसरी क्रांति है।

इसमें तनिक संदेह नहीं है कि यह एक क्रांति थी क्योंकि जैसा पूर्व के अध्यायों में वर्णित किया गया है, एक समय था जब ब्राह्मण सबसे अधिक गो मांसाहारी थे। यद्यपि अब्राह्मण लोग भी मांस खा लेते थे किंतु उनके वह प्रतिदिन सहज सुलभ नहीं था। गो एक अमूल्य पशु था और अब्राह्मण लोग केवल भोजन के लिए गोहत्या करें यह उनके लिए बहुत कठिन था। वह खास-खास समयों पर ही ऐसा कर सकता था। उस समय जब या तो उसे उसका धार्मिक कर्तव्य या किसी देवता को प्रसन्न करने की व्यक्तिगत विवशत होती थी। लेकिन ब्राह्मण की बात दूसरी थी, वह पुरोहित था। कर्मकांड के उस युग में शायद ही कोई दिन ऐसा हो जब किसी न किसी यज्ञ के निमित्त गो वध न होता हो और जिसमें कोई न कोई अब्राह्मण किसी न किसी ब्राह्मण को न बुलाता हो। ब्राह्मण के लिए हर दिन गोमांसाहार का दिन था। इसलिए ब्राह्मण सबसे बड़े गोमांसाहारी थे। ब्राह्मणों का यज्ञ धर्म के नाम पर निरीह और मासूम पशुओं की हत्या के आयोजन के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता था। वह बड़े तामझाम के साथ होता था और अपनी गो मांस लालसा को छिपाए रखने के लिए गूढ़ बनाने का प्रयत्न किया जाता था। इस रहस्यमय ठाठ बाठ की कुछ जानकारी पशु हत्या के संबंध में ऐतरेय ब्राह्मण में परिलक्षित है।

पशु की हत्या से पहले अत्यंत जटिल और विविध मंत्रों के साथ प्रारंभिक संस्कार किया जाता था। बलि की मुख्य बातों का आभास कर देना पर्याप्त है। बलि स्तंभ को ही यूप कहते हैं। उसी की स्थापना से यज्ञ आरंभ होता है। पशु की हत्या से पहले पशु को इस यज्ञ स्तंभ से ही बांधते हैं। यूप की आवश्यकता बताने के अनन्तर ऐतरेय ब्राह्मण में इसका तात्पर्य दिया है :-

"यूप एक शस्त्र है। इसके सिर के आठ छोर होने चाहिए। क्योंकि एक शस्त्र (लोहे के वल्लम) के आठ कोने होते हैं। जब भी वह उससे किसी शत्रु या विरोधी पर प्रहार करता है तो उसे मार डालता है। यह शस्त्र जिसे अभिभूत करना हो उसे अभिभूत कर देता है। यूप एक शब्द है जो पशु विनाश के लिए सीधा खड़ा रहता है। इससे यज्ञकर्ता का शत्रु जो (यज्ञ में) उपस्थित हो सकता है उस यूप को देखकर संकट ग्रस्त हो जाता है।"

यूप के लिए लकड़ी यज्ञकर्ता के यज्ञ करने के उद्देश्य के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की चुनी जाती हैं। ऐतरेय ब्राह्मण का कथन है -

"जो स्वर्ग चाहता है उसे अपनी यूप खादिर की लकड़ी से बनानी चाहिए क्योंकि देवताओं ने खादिर की लकड़ी के यूप से ही दिव्य लोक को जीता। उसी प्रकार यज्ञकर्ता खादिर की लकड़ी से बने हुए यूप से दिव्यलोक को जीतता है।"

"जो भोजन चाहता है और स्थूलता चाहता है उसे अपना यूप बेल (बिल्व) की लकड़ी से बनाना चाहिए। बेल के पेड़ पर प्रतिवर्ष फल लगते हैं। यह उर्वरता का प्रतीक है क्योंकि यह जड़ से शाखाओं तक (प्रतिवर्ष) आकार में बढ़ता रहता है। इसलिए यह मोटापे का प्रतीक है। जो यह जानता है और इसलिए अपना यूप बेल की लकड़ी का बनाता है उसके बच्चे और पशु मोटे होते हैं।"

"बेल की लकड़ी से बने यूप के बारे में इतना और कहना है जो बिल्व को बार-बार प्रकाश कहता है और ऐसा जानना है वह अपने स्वयं में प्रकाश बन जाता है और अपने स्वयं में सबसे श्रेष्ठ।"

"जो सौंदर्य और पवित्र विद्या चाहता है उसे अपना यूप पलाश की लकड़ी का बनाना चाहिए क्योंकि ढाक सौंदर्य और पवित्र विद्या का वृक्ष है। जो यह जानता है और इसलिए अपना यूप पलाश की लकड़ी का बनाता है वह सुंदर हो जाता है और पवित्र विद्या प्राप्त करता है।"

पलाश की लकड़ी से बने यूप के बारे में इतना और कहा गया है कि पलाश सब वृक्षों का गर्भ है। इसलिए वे उस पलाश के वृक्ष की बात करते हैं। जो यह जानता है उसकी सभी इच्छाएं चाहे किसी पेड़ से भी क्यों न हों, पूरी होती हैं।

उसके बाद यूप के अभिषेक का संस्कार होता है।

"अध्वर्यु कहता है हम यूप को अभिषेक कहते हैं। अपेक्षित मंत्र पढ़ो। होता मंत्र पढ़ता है अंजतित्वां अध्वरे (3, 8, 1,) अर्थात हे वृक्ष! पुरोहित दिव्य मधु से तेरा स्वागत करते हैं। यदि तू यहां सीधा खड़ा है अथवा यदि तू अपनी माता (पृथ्वी) पर लेटा हुआ है तो हमें धन दे। 'दिव्य मधु' पिघला हुआ मक्खन है जिससे पुरोहित यूप का अभिषेक करते हैं। दूसरे आधे मंत्र हमें दे आदि का अर्थ है 'चाहे तुम खड़े हो चाहे लेटे हो हमें धन दो।"

"तब होता दोहराता है, जातो जायते सुदिनत्वे (3, 8, 5) अर्थात उत्पत्ति के बाद वह (यूप) अपने जीवन के मध्यकाल में मरणशील मनुष्यों के यज्ञ के उपयोग में आता है। बुद्धिमान लोग उसे यूप (को) सजाने में संलग्न हैं। वह देवताओं के व्याख्यान पटु दूत की तरह

अपना स्वर ऊंचा करता है कि देवता उसे सुन सकें। वह (यूप) जात अर्थात उत्पन्न कहलाता है क्योंकि वह इस श्लोक के पहले चरण के उच्चारण से पैदा होता है। वर्धमान (शब्दों से) अर्थात बढ़ना से वे उसे (यूप को) इस प्रकार बढ़ाते हैं। पुनन्ति (शब्द से) अर्थात पवित्र करना, सजाना, वे उसे इस प्रकार पवित्र करते हैं। वह एक व्याख्यान पटु दूत शब्दों से देवताओं को यूप के अस्तित्व की सूचना देता है।"

"होता यत स्तंभ अभिषेक के संस्कार को समाप्त करता है। उस समय वह पढ़ता है:– युवा सुवासा परिविता : (3, 8, 4) अर्थात बंदनवार सज्जित यूप आ पहुंचा है वह उन सब वृक्षों से जो कभी भी उत्पन्न हुए हों बढ़ कर बुद्धिमान पुरोहित अपने मन के सुव्यवस्थित विचारों के मंत्र पाठ द्वारा उसे उठाते हैं। पट्टी से (सजा हुआ) यूप जीवनदायिनी वायु (आत्मा) है जो शरीर के अंगों द्वारा ढका है। वह श्रेष्ठ है इत्यादि शब्दों से उसका अर्थ है कि वह (यूप) बढ़िया होता जा रहा है (अधिक श्रेष्ठ सुंदर) इस मंत्र के बल से।"

अगला संस्कार आग से यज्ञ स्तंभ की परिक्रमा करना है। इस संबंध में ऐतरेय ब्राह्मण का कथन है:–

"जब (पशु) के चारों ओर आग घुमाई जाती है तो अध्वर्यु होता से कहता है–अपना मंत्र पाठ करो। तब होता को संबोधित करके गायत्री छंद में रचे गए तीन मंत्रों का पाठ करता है। अग्नि होता वा अध्वेरे (4, 15, 1–3) अर्थात (1) हमारा पुरोहित, अग्नि, एक घोड़े की तरह घुमाया जा रहा है। यह देवताओं में यज्ञ का देवता है। (2) एक रथी की तरह अग्नि यज्ञ के पास से तीन बार गुजरता है। वह देवताओं के पास आहुति ले जाता है। (3) भोजन का अधिष्ठाता अग्नि ऋषि आहुति के गिर्द घूमा, यह यज्ञकर्ता को धन देता है।"

"जब पशु के चहु ओर अग्नि लेकर घूमा जाता है तो उसे अपने देवता और अपने छन्द के द्वारा यशस्वी बनाना है। वह एक घोड़े की तरह ले जाया जाता है का अर्थ है कि वह उसे घुमाते हैं मानो यह कोई घोड़ा हो, एक रथी की तरह अग्नि तीन बार यज्ञ के पास से गुजरती है का अर्थ है कि वह एक रथी की तरह (शीघ्रता) से यज्ञ के चारों ओर वह वाजपति (भोजन अधिष्ठाता) कहलाता है, क्योंकि वह तरह–तरह के भोजनों का अधिष्ठाता है।"

"अध्वर्यु कहता है: हे होता! देवताओं को आहुति देने के लिए अतिरिक्त आज्ञा दो।

तब होतृ (बधिकों को) आदेश होता है– "हे दिव्य बंधिको। (अपना कार्य) आरंभ करो और जो मानवीय बधिक हो वह भी। इसका अर्थ है कि वह सभी बधिकों को चाहे वे देवताओं में हों चाहे मानवों में आज्ञा देता है कि (आरंभ करो)।"

"वध करने के शस्त्र यहां लाओ, तुम लोग जो यज्ञ के दोनों स्वामियों की ओर से यज्ञ का आदेश दे रहे हो।"

पशु आहुति है, यज्ञकर्ता आहुति का स्वामी है। इस प्रकार होतृ यज्ञ कर्ता को उसकी अपनी आहुति से यशस्वी बनाता है। इसलिए वे सत्य कहते हैं–जिस देवता के लिए भी पशु का वध किया जाता है वही उसका स्वामी है। यदि एक ही देवता के लिए पशु की बलि दी जाती हो तो पुरोहित को कहना चाहिए मेघतपये अर्थात यज्ञ के स्वामी के लिए (एक वचन) यदि देवताओं के लिए तो उसे द्विवचन का प्रयोग करना चाहिए यज्ञ के दोनों स्वामियों के लिए। यदि अनेक देवताओं के लिए है तो उसे बहुवचन का प्रयोग करना चाहिए यज्ञ के स्वामियों के लिए। यही निश्चित धर्म है।"

तुम उसके लिए अग्नि लाओ। जब पशु को वध स्थान की ओर ले जाया गया, तो उसने अपने सामने मृत्यु को देखा। वह देवताओं के पास नहीं जाना चाहता था, तब देवताओं ने उससे कहा–जाओ हम तुम्हें स्वर्ग पहुंचायेंगे। पशु मान गया और बोला तुम में से एक को मेरे आगे–आगे चलना चाहिए। देवताओं ने स्वीकार किया। तब अग्नि पशु के आगे–आगे चला और पशु उसके पीछे–पीछे। इसी से वे कहते हैं कि हर पशु पर अग्नि का अधिकार है, क्योंकि पशु अग्नि के पीछे–पीछे चला। इसीलिए वे पशु के आगे–आगे अग्नि ले जाते है।"

पवित्र दूब बिखेर दो। पशु वनस्पति पर ही जीता है। होता इस प्रकार पशु को उसकी समस्त आत्मा देता है। (क्योंकि वनस्पति उसका भाग समझी जाती है)।"

पशु के चारों ओर आग घुमाने के बाद यज्ञ के लिए पुरोहितों को दिया जाता है। यज्ञ के लिए पशु का समर्पण कौन करें? इस विषय में ऐतरेय ब्राह्मण की आशा है:–

मां, पिता, भाई, बहन, मित्र और साथियों को चाहिए कि वे वध करने के लिए पशु का समर्पण करें। (जिस समय ये शब्द कहे जाते हैं वे उस पशु को पकड़ लेते हैं जिसके बारे में यह माना जाता है कि वह माता पिता आदि के द्वारा सर्वथा परित्यक्त है)।"

इस निर्देश को पढ़ कर आश्चर्य होता है कि लगभग हर किसी के लिए इसकी क्या आवश्यकता है कि वह पशु को यज्ञ के लिए समर्पित करने के संस्कार में हिस्सा ले। कारण स्पष्ट है। यज्ञ में हिस्सा लेने के अधिकारी पुरोहितों की कुल संख्या सत्रह थी। स्वाभाविक तौर पर वे मृत पशु की पूरी की पूरी लाश अपने के लिए ले लेना चाहते थे।

वास्तव में यदि उन्हें सारी देह अपने ही लिए न मिले तो वे सत्रह पुरोहितों में कुछ ठीक–ठीक बांट भी नहीं सकते थे। विधानानुसार ब्राह्मण उस पशु पर किसी प्रकार का अधिकार तब तक नहीं जता सकते थे जब तक हर आदमी पशु के मांस के अपने अधिकार को सर्वथा छोड़ न दे। इसीलिए उक्त निर्देश में जो आदमी पशु के साथ आया हो उसे भी अपना अधिकार छोड़ देने का आदेश है।

अब पशु का वध करने का विधि–विधान आता है। ऐतरेय ब्राह्मण पशु की हत्या करने के विधि–विधान का ब्यौरा इस प्रकार देते हैं:–

"इसके पैर उतर की ओर करो, उसकी आंखे सूर्य की ओर, उसकी प्राण वायु, इसकी श्रवण शक्ति दिशाओं की ओर, इसका शरीर पृथ्वी को सौंप दो। इस प्रकार (होतृ) होता इसे लोकों के साथ जोड़ देता है।"

"सारी चमड़ी बिना काटे उतार दो। नाभि काटने से पहले ओझड़ी को चीर दो। (इसका मुंह बंद करके) इसका दम घोट दो और इसकी सांस अन्दर ही रोक दो। इस प्रकार वह (होतृ) होता पशुओं में श्वास डालता है।"

"इसकी छाती का एक टुकड़ा, बाज की शक्ल का, बाजुओं के दो टुकड़े, कुल्हाड़ी की शक्ल के, अगले पांव के दो टुकड़े धान की बालों के शक्ल के, कंधो के दो टुकड़े दो काइयों की शक्ल के, कमर के नीचे का हिस्सा अटूट रहे, जांघ के दो टुकड़े ढ़ाल की शक्ल के, दोनों घुटनों के दो टुकड़े पत्तों की शक्ल के, इसकी 26 पसलियां क्रमशः निकाल ली जाए। इसके प्रत्येक अंग को सुरक्षित रखा जाए। इस प्रकार वह उसके सारे अंगों से लाभ पाता है।"

यज्ञ के लिए पशुओं की हत्या करने के संबंध में दो संस्कार बच गए। एक है ब्राह्मण पुरोहित को, जिसने बधिक का काम किया, हत्या के पाप से मुक्त करने का संस्कार। सिद्धांत रूप में वे हत्यारे ठहरते हैं, क्योंकि पशु केवल यज्ञकर्ता का स्थानापन्न ही है। उन्हें हत्या के परिणाम से बचाने के लिए ऐतरेय ब्राह्मण ने होतृ होता को निम्नलिखित आज्ञा दी है:–

"ओझड़ी को न काटो, जो उल्लू की शक्ल की होती है।" और हे वध करने वालो! तुम्हारे बच्चों अथवा तुम्हारी संतान में भी कोई ऐसा न हो जो उसे काट दे। इन शब्दों को कह कर वह देवताओं और मनुष्यों दोनों के मध्य में जो हत्यारे हैं उनको देता है।

तब होतृ होता तीन बार कहता है अध्रिगु, और हे अन्य लोगों पशु का वध करो, इसे अच्छी तरह करो, इसका वध करो, हे अध्रिगु पशु की हत्या हो चुकने पर उसे तीन बार कहना चाहिए इस हत्या का दुष्परिणाम हमसे दूर करो, क्योंकि देवताओं में अध्रिगु है जो (पशु को) चुप कराता है और अध्रिगु 'दूर दूर' कहे, जो उसे नीचे गिराता है। यह शब्द कह कर पशु को उन्हें सौंप देता है, जो उसका मुंह बंद करके उसे चुप कराते हैं, और उन्हें जो उसका वध कर डालते हैं।

तब होता जाप करता है। बधिको, तुम्हारा पुण्य यहां हमारे पास रहे, तुम्हारा पाप अन्यत्र चला जाए। होता उस कथन से पशु वध की आज्ञा देता है। क्योंकि अग्नि जब देवताओं का क्षेत्र था तो उसने भी इन्हीं शब्दों में (पशु के) वध की आज्ञा दी थी।

अंत में जप से होता उन सब को जो पशु का स्वास बंद करते है अथवा जो उसका वध करते हैं, उस पाप के दुष्परिणाम से मुक्त करता है जो उनके किसी टुकड़े को अतिशीघ्रता से काटने, किसी टुकड़े को अति विलम्ब से काटने, किसी टुकड़े को बहुत बड़ा काटने और किसी टुकड़े को बहुत छोटा काटने के परिणामस्वरूप हो गया हो। होता इसका आनंद लेते हुए अपने आप को तमाम पापों से मुक्त करता है और पूरी आयु प्राप्त करता है और इससे यज्ञकर्ता भी अपनी संपूर्ण आयु प्राप्त करता है। जिसको यह ज्ञान है वह अपनी पूरी आयु प्राप्त करता है।

इससे आगे ऐतरेय ब्राह्मण मृत पशु के शरीर के भाग को ठिकाने लगाने के प्रश्न पर विचार करता है। उसका निदेश है:–

"इसका गोबर छिपाने के लिए जमीन में एक गड्ढा खोदो। गोबर वनस्पति से बनता है, क्योंकि पृथ्वी वनस्पति का स्थान है। इसलिए होता अंत में गोबर को उसके उचित स्थान पर रखता है। प्रेतात्माओं को रक्त दो, क्योंकि एक बार देवताओं ने प्रेतात्माओं को हविर्यज्ञ पूर्णिमा तथा प्रतिपदा के दिन की बलि का उनका हिस्सा उन्हें न दे भूसी और छोटा धान मात्र दिया और फिर उन्हें सोम तथा पशु मांस का निकाल कर रक्त दिया। इसलिए होता इस मंत्र का जाप करता है:–प्रेतात्माओं को छोड़ दो। उनका यह हिस्सा देकर फिर उन्हें यज्ञ में से कोई और चीज लेने से वंचित कर दिया जाता है। वे कहते हैं दुरात्माओं को यज्ञ में याद नहीं करना चाहिए, राक्षस, असुर दुरात्मा कोई भी हों, क्योंकि यज्ञ बिना विघ्न बाधा के होना चाहिए। लेकिन दूसरों का मत है कि उन्हें याद करना चाहिए क्योंकि यदि किसी किसी को उसके हिस्से से वंचित करता है तो जिसे वह वंचित करेगा वह उसे कष्ट देगा। यदि वह अपने दंड से बच गया तो उसके पुत्र को और यदि वह भी बच गया तो उसके पौत्र को कष्ट भोगना पड़ेगा। इस प्रकार जो कष्ट तुम्हें मिलता वह कष्ट तुम्हारे पुत्र या पौत्र को मिलता है।"

यदि होता संबोधन करे तो उसे मन्द स्वर में करना चाहिए क्योंकि मन्द स्वर और प्रेतात्माएं दोनों ही छिपी सी रहती है। यदि वह उस स्वर में बोलता है तो यह प्रेतात्माओं की आवाज में मिलता है और वह राक्षस स्वर (एक भयानक आवाज) में बोलने लग सकता है। जिस वाणी में क्रोधी तथा शराबी आदमी बोलते हैं वह राक्षसों की बोली है। जिसे यह ज्ञान है वह न स्वयं क्रोधी होगा

न उसकी संतान वैसी होगी।

तब अंतिम संस्कार बाकी रह जाता है– पशु के शरीर के अंग देवी देवताओं का समर्पित करने का संस्कार है। यह मनोत कहलाता है। आत्रेय ब्राह्मण के अनुसारः–

अध्वर्यु होता से कहता है–मनोत के लिए काटे गए यज्ञ के पशु के अंगों को देवताओं को समर्पित करने के उपर्युक्त मंत्र कहो। वह तब इस मंत्र को दोहराता है–"हे अग्नि तुम प्रथम मनोत हो।"

अब पशु के मास के बंटवारे का प्रश्न शेष रह गया। इस विषय पर आत्रेय ब्राह्मण का निर्णय इस प्रकार है –

अब बलि के पशु के भिन्न–भिन्न अंगों को पुरोहितों में बांटे जाने का प्रश्न उपस्थित होता है। हम इसका वर्णन करेंगे। जबड़े की दोनों हड्डियों और जिह्वा प्रस्तोता को दी जानी चाहिए। बाज की आकृति में छाती उद्गाता को, गर्दन और ताल प्रतिहर्ता को, कमर के नीचे का दाहिनी ओर का हिस्सा होता को, बाया ब्रह्मा को, दाई जांघ मैत्रवरण को, बाई ब्राह्मणाच्छसों को, कंधे के साथ की दाई ओर से अध्वर्यु को, बाई मंत्रोच्चारण के साथ देने वालों उपमाताओं को बायां कंधा प्रतिप्रस्तर को, दाएं बाजू का निचला हिस्सा नेष्टा को, बाएं बाजू का निचला हिस्सा पौत्र को, दाहिनी जांघ का ऊपर का भाग आच्छावक को, बाई जांघ का ऊपर का हिस्सा अग्निघर को, दाएं बाजू का ऊपर का हिस्सा आत्रेय को बाएं बाजू का ऊपर का हिस्सा सदस्य को, कमर की हड्डी और अंडकोष यज्ञ कराने वाले गृहस्थ को। दायां पांव भोज देने वाले गृहपति को, बांया पांव भोजन देने वाले गृहपति की भार्या को, ऊपर का होठ गृहपति और उसकी भार्या के समानाधिकार में है, जिसका बंटवारा गृहपति करेगा। पशु की पूंछ वे भार्याओं को देते हैं किंतु यह उन्हें किसी ब्राह्मण को ही देनी चाहिए। गर्दन पर मणिक और तीन कीकस ग्रावात्तुत को, तीनों कीकस और पीछे के मांसल हिस्से का अर्धांश क्कैर्त उन्मेता को, गर्दन पर के मांसल हिस्से क्लोम को, उसका आधा हिस्सा वध करने वाले को। यदि वध करने वाला स्वयं ब्राह्मण न हो तो किसी ब्राह्मण को दे दें। सिर सुब्रहमण्य को देना चाहिए जो कल सोम यज्ञ के समय (स्वः सुत्या) बोला, सोम यज्ञ में यज्ञ की बलि बने पशु का वह हिस्सा जो यज्ञ भोज का है वह सब पुरोहितों का है, केवल होता के लिए वह ऐच्छिक है।

बलि के पशु के इन अंगों की संख्या 36 है। जिन श्लोकों से यज्ञ होता है प्रत्येक भाग उसके एक चरण का प्रतीक है। बृहती छंद में 36 शब्द खंड होते हैं और दिव्य लोक बृहती की प्रकृति के हैं। इस प्रकार पशु के 36 हिस्से करके वे इस लोक तथा स्वर्ग में जीवन लाभ करते हैं। और इह लोक और परलोक दोनों में प्रतिष्ठित होकर वे वहां विचरते हैं।

जो उपरोक्त रीति से पशु के मांस को बंटवारा करते हैं उनके लिए यह स्वर्ग सोपान बन जाता है। लेकिन जो इससे उलटा विभाजन करते हैं वे गुंडे और शरारती हैं जो केवल अपनी मांसाहार की तृष्णा के लिए पशु की बलि देते हैं। बलि के पशु का यह विभाग श्रुत के पुत्र देवभाग का आविष्कार है। जब वह इस जीवन में जी रहा था तो उसने इस रहस्य को किसी को भी नहीं सौंपा। किंतु किसी अलौकिक देव दूत ने वभ्रु के पुत्र गिरिजा को सब समाचार कह दिया। उसके समय सु पुरूष इसका अध्ययन करते हैं।

ऐतरेय ब्राह्मण में जो कुछ कहा गया है। उससे दो बातें असंदिग्ध तौर पर स्पष्ट होती हैं। एक तो यह कि बलि के पशु के सारे के सारे मांस को ब्राह्मण ही ले लेते हैं। एक जरा से टुकड़े के अतिरिक्त वे यज्ञ कराने वाले गृहस्थ को भी कुछ न लेने देते थे। दूसरी बात यह है कि पशुओं का वध करने के लिए ब्राह्मण स्वंय कसाई का काम करते थे। सिद्धांत की दृष्टि से यज्ञ के जिस पशु की बलि दी गई है ब्राह्मणों को उसका मांस नहीं खाना चाहिए। यज्ञ का आधारभूत सिद्धांत है कि मानव देवताओं के प्रति अपने आपको बलिदान करता है। वह अपनी जान बचाने के लिए ही अपने बजाय पशु की बलि देता है। इसका यह आशय हुआ कि जो पशु का मांस खाता है वह आदमी का ही मांस खाता है, क्योंकि यहां पशु आदमी का ही स्थानापन्न है यह मत ब्राह्मणों के स्वार्थ के लिए बड़ा घातक था। ब्राह्मण बलि के पशु का सारा मांस आप ही हड़पना चाहते थे। ऐतरेय ब्राह्मण ने जब देखा कि इस मत को स्वीकार करने से ब्राह्मणों के हाथ से बलि के पशु का मांस के निकल जाने की आशंका है तो उसने प्रयत्नपूर्वक इस मत को सीधे–सीधे अस्वीकार करके उसकी व्याख्या करने का प्रयत्न किया है।

"जो व्यक्ति यज्ञ के रहस्यों में दीक्षित होता है वह अपने आपको सब देवताओं के प्रति बलिदान कर देता है। अग्नि सब देवताओं का प्रतिनिधि है और सब देवताओं का प्रतिनिधि सोम है। जब वह यज्ञकर्ता पशु को अग्नि सोम की बलि चढ़ाता है तो वह अपने आपको सभी देवताओं के प्रति बलिदान होने से मुक्त कर देता है।"

कहने वाले कहते हैं, अग्नि सोम को बलि दिए गए पशु का मांस न खाओ, जो कोई इस पशु का मांस खाता है वह मानव का मांस खाता है क्योंकि यज्ञकर्ता पशु की बलि चढ़ा कर अपने आपको बलिदान होने से बचाता है। लेकिन इस मत की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

इन बातों के रहते, अब यह सिद्ध करने के लिए किसी और प्रमाण की आवश्यकता नहीं कि ब्राह्मण न केवल गोमांसाहारी थे अपितु कसाई भी थे।

तब ब्राह्मणों ने पैंतरा क्यों बदला? हम उनके पैंतरा बदलने की बात के दो हिस्से करते हैं। पहला उन्होंने गोमांसाहार क्यों छोड़ दिया?

II

जैसा कि ऊपर दिखाया जा चुका है अशोक ने गोहत्या को कभी कानून से बंद नहीं किया था। यदि बंद किया भी था, तो एक बौद्ध सम्राट द्वारा बनाए गए कानून को ब्राह्मणों ने कभी नहीं माना है।

क्या मनु ने गोहत्या का निषेध किया? यदि उसने किया तो वह ब्राह्मणों के लिए मान्य होगा और ब्राह्मणों में इस परिवर्तन की संतोषजनक व्यवस्था भी समझी जा सकती है। मनुस्मृति में निम्न श्लोक मिलते हैं:–

5.46– जो प्राणियों बांधने, मारने का क्लेश देने की इच्छा नहीं करता वह सब जीवों का हित चाहने वाला अत्यंत सुख पाता है।

5.47– जो किसी प्राणी को दुख नहीं देता, वह जिस धर्म को मन से चाहता है, जो कर्म करता है जिस पदार्थ पर ध्यान लगाता है वह उसे अनायास ही प्राप्त होता है।

5.48– प्राणियों का हिंसा किए बिना कभी मांस उत्पन्न नहीं हो सकता पशुओं का वध करना स्वर्ग का साधन नहीं है। अतः मांस खाना छोड़ देना चाहिए।

5.49– मांस का उत्पत्ति और प्राणियों के वध का बंधन (निर्दयता) होती है। इस बात पर अच्छी तरह विचार कर सब प्रकार के मांस भक्षण को त्याग देना चाहिए।

यदि इन श्लोकों को ठोस निषेध आज्ञाएं स्वीकार कर लें तो इनसे ही इस बात पर पर्याप्त व्याख्या हो जाती है कि ब्राह्मण मांसाहार छोड़कर शाकाहरी क्यों बन गए? लेकिन श्लोकों को कानून के रूप में निर्णायक निषेध स्वीकार करना असंभव है। या तो ये केवल प्रेरणाएं हैं अथवा प्रक्षेप हैं जो ब्राह्मणों को शाकाहारी बन जाने के बाद उसके कृत्य की प्रशंसा में बाद में जोड़ दिए गए। यह दूसरी बात ही ठीक है क्योंकि मनुस्मृति के बाद में जोड़ दिए गए। यह दूसरी बात ही ठीक है क्योंकि मनुस्मृति के इस पांचवे अध्याय में ही आने वाले दूसरे श्लोकों से सिद्ध होता है –

5.28– प्रजापति ब्रह्मा ने यह सब जीव का खाद्य ही कल्पित किया है। स्थावर (अन्न, फल आदि) और जंगम, पशु, पक्षी आदि सब जीव–जीवों के ही भोजन हैं।

5.29– चर–जीवों का अन्न (अचर, तृण आदि) है, दाढ़ वालों (व्याघ्र आदि) का बिना दाढ़ के जीव (हिरण आदि) हैं। हाथ वालों (मनुष्य) का अन्न बिना हाथ के जीव (मछली आदि) हैं, और शेरों (सिंह आदि) का भक्ष्य भीरू (जीव) है।

5.30– खाने वाला जीव खाने योग्य प्राणियों को प्रतिदिन खाकर भी दोष का भागी नहीं होता, क्योंकि ब्रह्मा ने ही खाद्य और खाने वाले दोनों का निर्माण किया है।

"5.56– मांस खाने, मद्यपान करने और मैथुन करने में दोष नहीं है, क्योंकि जीवों की प्रवृत्ति है, परंतु उससे निवृत्त होना महाफलदायी है।"

"2.27–मंत्रों द्वारा पवित्र किया मांस खाना चाहिए। ब्राह्मणों को शास्त्रोक्त विधि से मांस खाना चाहिए और प्राणों पर संकट आ पड़ने पर मांस अवश्य खाना चाहिए।"

"5.31– यज्ञ के निमित्त मांस भक्षण को दैव विधि कहा गया है। इसके विरूद्ध मांस भक्षण राक्षसी वृत्ति है।"

"5.32– खरीद कर या स्वंय कहीं से लाकर या स्वयं मारकर अथवा किसी का दिया हुआ मांस देवताओं और पितरों को अर्पित कर खाने वाला दोषी नहीं होता।"

"5.42– वेद के तत्व को जानने वाला द्विज इन पूर्वोक्त विधि कर्मों से पशु वध करता हुआ स्वयं को और पशु को उत्तम गति प्राप्त करता है।"

"5.39– स्वम्भू ब्रह्मा ने यज्ञ के लिए और सब यज्ञों की समृद्धि के लिए पशुओं को स्वयं बनाया है, इसलिए यज्ञ में पशु वध को वध नहीं कहा जाता।"

"5.40– औषधियां, पशु, वृक्ष, कछुए आदि और पक्षी ये सब यज्ञ के निमित्त मारे जाने पर फिर उत्तम योनि में जन्म ग्रहण करते हैं।"

मनु इससे आगे जाते हैं और मांसाहार अनिवार्य ठहराते हैं। निम्नलिखित श्लोक ध्यान देने योग्य है:–

"5.35– यथाविधि नियुक्ति होने पर श्राद्ध और मधुपर्क में जो मनुष्य मांस नहीं खाता वह मरने के अनन्तर इक्कीस जन्म तक पशु होता है।"

स्पष्ट है कि मनु ने मांसाहार का निषेध नहीं किया। मनु ने गोहत्या का निषेध नहीं किया। यह मनु से ही सिद्ध है। पहली तो यह बात है कि मनुस्मृति में गो का उल्लेख केवल उन निम्नलिखित नियमों की सूची में मिलते है जो मनु के अनुसार स्नातकों के लिए मान्य होने चाहिए।

1. गो का सूंघा हुआ भोजन एक स्नातक के लिए निषिद्ध है।
2. जिस रस्सी में बछड़ा बंधा हुआ हो उसे लांघना एक स्नातक के लिए निषिद्ध है।
3. गो–ब्रज (गोशाला) में लघु शंका करना स्नातक के लिए निषिद्ध है।
4. गो की ओर मुंह करके मल–मूत्र विसर्जन करना स्नातक के लिए निषिद्ध है।
5. गो–ब्रज (गोशाला) में प्रविष्ट होने पर स्नातक को चाहिए कि अपना दायां हाथ नंगा कर ले।

6. यदि कोई गो अपने बछड़े को दूध पिला रही हो तो उसमें बाधा डालना अथवा किसी को उसकी सूचना देना स्नातक के लिए निषिद्ध है।

7. गो पर चढ़ना स्नातक के लिए निषिद्ध है।

8. गो की हिंसा करना अर्थात उसे दुख देना स्नातक के लिए निषिद्ध है।

9. जूठे मुंह गो को स्पर्श करना स्नातक के लिए निषिद्ध है।

इन उल्लेखों से सिद्ध होता है कि मनु गो को पवित्र पशु नहीं मानते थे। दूसरी ओर वह उसे अपवित्र पशु मानते थे जिसके स्पर्श से संस्कार–जन्य अपवित्रता होती थी।

मनुस्मृति में ऐसे श्लोक हैं जिनसे सिद्ध होता है कि मनु ने गोमांस भक्षण का निषेध नहीं किया था। इस संबंध में तीसरे अध्याय के तीसरे श्लोक का उल्लेख किया जा सकता है। यह इस प्रकार है–

"अपने धर्म में प्रसिद्ध, पिता ब्रह्मदाए को प्राप्त किए हुए, माला पहने हुए तथा श्रेष्ठ आसन पर बैठे ब्रह्मचारी की पूजा पिता या आचार्य गोदुग्ध के मधुपर्क से करे।"

प्रश्न उठता है कि मनु एक स्नातक को गो देने की सिफारिश क्यों करते हैं? स्पष्ट ही है जिससे यह मधुपर्क बना सके। यदि ऐसा हो तो इसका यही अर्थ है कि मनु को यह बात ज्ञात थी कि ब्राह्मण गो–मांस का भक्षण करते हैं और यह उसे मना नहीं करते थे।

दूसरा उल्लेख उस चर्चा का है जो मनु ने पशुओं के खाद्य और अखाद्य मांस के बारे में की है। अध्याय 5 के मंत्र 18 में मनु का कथन है:–

पचनखियों में सेह, साही, गोह, गैंडा, कछुआ, खरहा तथा एक ओर दांत वाले पशुओं में ऊंट को छोड़कर बकरे आदि पशु भक्ष्य हैं– ऐसा कहा है।

इस श्लोक में मनु ने ऐसे घरेलु पशुओं, जिनके एक ही जबड़े में दांत होते हैं, उनमें ऊंट ही नहीं, गो के मांस खाने की भी अनुमति देता है किंतु यह बात ध्यान देने की है कि मनु गो को अपवाद स्वरूप नहीं स्वीकार करते। उसका स्पष्ट अर्थ है कि मनु को गो मांसाहार में कोई आपत्ति नहीं थी। मनु ने गो हत्या को अपराध नहीं ठहराया। उसकी दृष्टि में पापकर्म दो प्रकार के हैं:–

(1) महापातक (2) उपपातक

महान पातकों में से कुछ ये हैं–

11.54 ब्रह्म–हत्या, मद्यपान, चोरी, गुरूपत्नीगमन ये (चारों) महापातक कहे गए हैं और इनका संसर्ग भी (महापातक) है।

उपपातक अर्थात मामूली अपराधों में से कुछ ये हैं:–

11.59 गोवध, जाति और कर्म से दूषित मनुष्यों से यज्ञ कराना, परस्त्रीगमन, अपने का बेचना, गुरू माता, पिता की सेवा का त्याग, स्वाध्याय का त्याग, स्मार्त अग्नि का त्याग, स्वाध्याय का त्याग, स्मार्त अग्नि का त्या और पुत्र के भरण पोषण का त्याग।

इससे यह स्पष्ट है कि मनु की दृष्टि से गो हत्या केवल एक मामूली पाप था 'उपपातक'। यह निदंनीय तभी था जब गो की हत्या बिना किसी उचित तथा पर्याप्त कारण के हो। और यदि ऐसा न हो तो यह कोई बहुत घृणित कर्म नहीं था। याज्ञवल्य का मत भी ऐसा ही था।

इस बात से यही सिद्ध होता है कि ब्राह्मण पीढ़ी दर पीढ़ी गोमांसाहारी बने रहे। उन्होंने गोमांसाहार क्यों छोड़ दिया? वे एक दम दूसरी सीमा पर चले गए। उन्होंने गोमांस ही नहीं मास खाना भी छोड़ दिया और शाकाहारी बन गए ये एक साथ दो क्रांतियां हो गई। जैसा दिखाया गया है उन्होंने यह अपने दैवी स्मृतिकार मनु की शिक्षा के कारण नहीं किया गया है। ब्राह्मणों ने ऐसा क्यों किया? क्या यह किसी सिद्धांत के कारण अथवा किसी अभिप्रेत समरनीति के तहत ऐसा हुआ?

इस प्रश्न के दो उत्तर हैं। एक उत्तर तो यह है कि गो की पूजा उस अद्वैत दर्शन का परिणाम है जिसकी शिक्षा है कि समस्त विश्व में ब्रह्म व्याप्त है और इसलिए सारा जीवन चाहे वह मनुष्य को हो, चाहे पशु का हो, पवित्र है। स्पष्ट ही है कि यह व्याख्या सन्तोषजनक नहीं है। पहले तो इसका वास्तविकता से कोई मेल नहीं। वेदांत सूत्र जो ब्रह्म की एकता का उपदेश देते हैं, यज्ञों के लिए पशु हत्या को वर्जित नहीं करते। यह दूसरे अध्याय के 1.28वें सूत्र से स्पष्ट है। दूसरे यदि यह परिवर्तन वेदांत के आदेश को आचरण में उतारने का परिणाम है तो फिर गो तक क्यों सीमित है? यह दूसरे सभी पशुओं पर भी लागू होना चाहिए था।

दूसरी व्याख्या पहली की अपेक्षा अधिक बेतुकी है। उसके अनुसार ब्राह्मण के जीवन के इस परिवर्तन का कारण आत्म परिवर्तन का सिद्धांत है। इस व्याख्या का भी वास्तविकता से कोई मेल नहीं। वृहदारण्यक उपनिषद में आत्मा के पुनर्जन्म ग्रहण करने के सिद्धांत का प्रतिपादन है, तो भी उसका कहना है यदि मनुष्य यह चाहता है कि उसे मेधावी पुत्र उत्पन्न हो तो वृषभ या बैल के मांस के साथ भात और घी मिला कर खाना चाहिए। फिर इसका भी क्या कारण है कि उपनिषदों में मनु के समय अर्थात लगभग 400 वर्ष बाद तक ब्राह्मणों के आचरण पर इस सिद्धांत का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तीसरे यदि आत्मा के पुनर्जन्म के सिद्धांत के कारण ब्राह्मण शाकाहारी बने तो अब्राह्मण भी क्यों नहीं बने?

मेरी दृष्टि में यह ब्राह्मणों के चातुर्य का एक अंग है कि वे गोमांसाहारी न रह कर गोपूजक बन गए। इस गोपूजा के रहस्य का मूल बौद्धों और ब्राह्मणों के संघर्ष में तथा उप उपायों में खोजना होगा जो ब्राह्मणों ने बौद्धों से बाजी मार ले जाने के लिए। बौद्धों और ब्राह्मणों में तू डाल–डाल मैं पात–पात की होड़ भारतीय इतिहास की एक निर्णायक घटना है। इस वास्तविकता को अंगीकार किए बिना हिंदू धर्म के कुछ अंगों की व्याख्या हो ही नहीं सकती। दुर्भाग्यवश भारतीय इतिहास के विद्यार्थियों की दृष्टि से इस बौद्ध–ब्राह्मण संघर्ष का महत्व एकदम परोक्ष रहा है। वे जानते हैं कि ब्राह्मणवाद नाम की चीज रहीं है लेकिन वे इस बात से एकदम अपरिचित प्रतीत होते हैं कि ये मत लगभग 400 वर्ष तक एक दूसरे पर बाजी मार ले जाने के लिए संघर्ष करते रहे और भारतीय धर्म, समाज तथा राजनीतिक पर उनके इस संघर्ष की अमित छाप विद्यमान है।

यहां सारे संघर्ष की कथा का वर्णन करने के लिए स्थान नहीं है। दो चार महत्व की बातों का उल्लेख किया जा सकता है। एक समय था जब अधिकांश भारतवासी बौद्ध थे। यह सैकड़ों वर्षों तक भारतीय जनता का धर्म रहा। इसने ब्राह्मणवाद पर ऐसे आक्रमण किए जैसे इससे पहले किसी ने नहीं किए थे। ब्राह्मणवाद अवनति पर था और यदि एकदम अवनति पर नहीं तो भी उसे अपने अस्तित्व की ही चिंता हो रही थी। बौद्ध धर्म के विस्तार के कारण ब्राह्मणों का प्रभुत्व न राजदरबार में रहा और न जनता में। वे इस पराजय से पीड़ित थे, जो उन्हें बौद्ध धर्म के हाथों मिली थी और अपनी शक्ति तथा प्रभुत्व को पुनः प्राप्त करने के लिए हर प्रकार से प्रयत्नशील थे। जनता के मन पर बौद्ध धर्म का ऐसा गहन प्रभाव पड़ चुका था और वह उससे इतनी अधिक प्रभावित थी कि ब्राह्मणों के लिए और किसी भी तरह बौद्ध धर्म की बराबरी कर सकना एकदम असंभव था।

उसका एक ही उपाय था कि वे बौद्धों के जीवनदर्शन को अपनाएं और इस मामले में उनसे भी चार कदम आगे बढ़ जाएं। बुद्ध के परिनिर्वाण के बाद बौद्धों ने बुद्ध की मूर्तियां तथा स्तूप बनाने आरंभ किए। ब्राह्मणों ने उसका अनुकरण किया। उन्होंने अपने मंदिर बनाए और उनमें शिव, विष्णु राम, कृष्ण आदि की मूर्तियां स्थापित कीं। उद्देश्य इतना ही था कि बुद्ध मूर्ति पूजा से प्रभावित जनता को किसी न किसी तरह अपनी ओर आकर्षित करें। इस प्रकार जिन मंदिरों और मूर्तियों का हिंदू धर्म में कोई स्थान नहीं था उनके लिए स्थान बना। बौद्धों ने उस ब्राह्मण धर्म को त्याग दिया था जिसमें पशु बलि वाले और विशेष रूप से गोवध वाले यज्ञादि होते थे। गो वध के बारे में बौद्धों की आपत्ति का जनता पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। इसके दो कारण थे– एक तो वह लोग कृषि प्रधान थे और दूसरे गो बहुत उपयोगी थी। अधिक संभावना यही है कि उस समय ब्राह्मण गो घातक समझे जाकर घृणा के पात्र बन गए थे। ठीक वैसे ही जैसे अतिथि भी गोश्त की घटनाओं के कारण घृणित समझे जाने लगे थे। क्योंकि जब भी कोई अतिथि आता था तभी सम्मान में गो की हत्या करनी पड़ती थी। ऐसी परिस्थिति में अपनी स्थिति सुधारने के लिए ब्राह्मण यज्ञ रूप में जो पूजा करते थे और उसके साथ जो गोवध होता था उसे छोड़ देने में ही ब्राह्मणों ने अपना हित समझा।

गोमांसाहार छोड़ने में ब्राह्मणों का उद्देश्य बौद्ध भिक्षुओ से उनकी श्रेष्ठता छीन लेना ही था। यह बात ब्राह्मणों के शाकाहारी बन जाने के सिद्ध होती है। अन्यथा ब्राह्मण शाकाहारी क्यों बना? इसका उत्तर यही है कि बिना शाकाहारी बने वह पुनः उस स्थान को प्राप्त कर ही नहीं सकता था जो बौद्ध धर्म के प्रसार के फलस्वरूप उसके पांव के नीचे से खिसक चुका था। इस संबंध में यह बात स्मरण रखने की है कि बौद्धों की तुलना में एक बात को लेकर ब्राह्मण जनता की दृष्टि में बहुत हीन पड़ता था। यह बात पशु वध की थी जो ब्राह्मणवाद की जड़ थी और जिसका बौद्ध धर्म एकदम विरोधी था। यह स्वाभाविक है कि ऐसी जनता में जो कृषि पर निर्भर करती हो बौद्ध धर्म के प्रति आदर और उस ब्राह्मण धर्म के प्रति घृणा हो जिसमें अन्य पशुओं के साथ गोओं और बैलों का भी वध होता हो। अपने विगत सम्मान को बचाने के लिए ब्राह्मण क्या कर सकते थे सिवाय इसके कि बौद्ध भिक्षुओं से भी एक कदम आगे जाकर न केवल गोमांस भक्षण ही छोड़ दें वरन शाकाहारी बन जाए। शाकाहारी बनने में ब्राह्मणों का यही उद्देश्य था। यह कई तरह से सिद्ध हो सकता है।

यदि ब्राह्मणों ने पशु यज्ञ को बुरा मान कर सिद्धांत की दृष्टि से अपना आवरण बदला तो उनके लिए केवल इतना ही पर्याप्त था कि वे यज्ञों के लिए पशुओं का वध करना बन्द कर देते उनके लिए शाकाहारी बनना आवश्यक न था किंतु वे शाकाहारी बन कर रहे। इससे यह स्पष्ट होता है कि उनकी दृष्टि गूढ़ थी और एक दूसरी तरह भी उनके लिए शाकाहारी बनना एकदम अनावश्यक था क्योंकि बौद्ध भिक्षु भी शाकाहारी नहीं थे। इस कथन से कुछ लोगों को आश्चर्य हो सकता है क्योंकि सामान्य धारणा यह है कि अहिंसा और शाकाहार में आवश्यक तथा अनिवार्य संबंध है। यह धारणा कि बौद्ध भिक्षु मांस स्पर्श नहीं करते रहे होंगे लेकिन यह एक भ्रांति है। वास्तविक बात यह है कि भिक्षु त्रिकोटी परिशुद्ध (तीन प्रकार से शुद्ध) मछली मांस ग्रहण कर सकता था। आगे चल कर यह पांच प्रकार का हो गया। चीनी यात्री ह्वेग सांग इससे परिचित था। उसने मांस के शुद्ध प्रकारों को सां–चिंग कहा है। थामस वाल्टर्स ने भिक्षुओं में इस प्रथा की उत्पत्ति की इस प्रकार व्याख्या की है उसकी कही कथा के अनुसार:–

"बुद्ध के समय में वैशाली में सिंह नाम का एक सम्पन्न सेनापति था, जिसने बौद्ध धर्म ग्रहण कर दिया था। वह भिक्षु संघ का उदार समर्थक बन गया और

भिक्षुओं को मांस भोजन की कमी न होने देता था। जब यह बाहर पता लगा कि भिक्षु इस प्रकार का तैयार किया हुआ भोजन ग्रहण कर लेते हैं तो तैर्थिकों ने उनकी निंदा करनी शुरू की जो संयमी साधक भिक्षु थे। जब उन्होंने यह सुना तो भगवान को सूचना दी।'' भगवान ने उन्हें संबोधन करके कहा भिक्षुओ! किसी ऐसे पशु का मांस नहीं खाना चाहिए जिसे तुमने देखा हो कि तुम्हारे लिए मारा गया है, जिसके बारे में तुमने सुना हो कि तुम्हारे लिए मारा गया है। किंतु उन्होंने भिक्षुओं को त्रिकोटि परिशुद्ध मत्स्य मांस की अनुज्ञा दे दी अर्थात ऐसे पशु के मांस की जिसको न देखा हो कि हमारे लिए मारा गया हो, न सुना हो कि हमारे लिए मारा गया है और न किसी प्रकार का संदेह ही उत्पन्न हुआ हो कि हमारे लिए मारा गया है। पालि और सुफेन विनय पिटक के अनुसार बुद्ध और भिक्षु संघ को मध्याह्न भोजन दिया गया था। इस भोजन के लिए ही एक बैल की लाश की व्यवस्था की गई थी। निग्रन्थों ने भिक्षुओं की निंदा की। बुद्ध ने यह त्रिकोटि परिशुद्ध का नया नियम बनाया। अब से जो मांस भोजन भिक्षु कर सकते थे, वह त्रिकोटि परिशुद्ध अथवा त्रिकोटि परिशुद्ध मांस कहलाने लगा। इसे थोड़े में अदृष्ट अश्रुत अपरिशंकित अथवा चीनी अनुवाद के ढंग पर मेरे लिए मारा गया। ऐसा न देखा, न सुना, न संदेह हुआ कहा गया। तब दो और तरह का मांस भिक्षुओं के लिए नियामानुकूल ठहराया गया। जिस पशु की स्वाभाविक मृत्यु हो गई, तथा जो किसी शिकारी पक्षी अथवा अन्य किसी जंगली पशु द्वारा मारा गया हो। इस प्रकार पांच तरह का ऐसा मांस था जिसे कोई बौद्ध स्वतंत्रतापूर्वक उपयोग कर सकता था। तब यह अदृष्ट, अश्रुत और अपरिशंकित एक जाति हो गई और उसी में स्वाभाविक मृत्यु तथा पक्षीहत को मिला देने से सा–चिह्न बन गया।

जब बौद्ध भिक्षु मांस खाते थे तो ब्राह्मणों को उसे छोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं थी। फिर ब्राह्मण मांसाहार छोड़ कर शाकाहारी क्यों बन गए। इसका कारण इतना ही था कि वे जनता की दृष्टि में बौद्ध भिक्षुओं के साथ समान तल पर नहीं खड़ा होना चाहते थे।

यदि ब्राह्मण केवल यज्ञ करना और उसमें गो वध करना छोड़ देते तो इसका केवल एक सीमित परिणाम होता। अधिक से अधिक इससे ब्राह्मण और बौद्ध धर्म समान धरातल पर खड़े हो जाते। यह बात तब होती यदि वे मांसाहार के संबंध में बौद्ध भिक्षुओं का अनुकरण करते। इससे ब्राह्मणों को अपने आपको बौद्धों से श्रेष्ठ सिद्ध करने का अवसर नहीं मिलता जो कि उनकी आकांक्षा थी। यज्ञों में गोवध का विरोध करके बौद्धों ने जनता के हृदय में आदर का स्थान प्राप्त कर लिया था। ब्राह्मण उन्हें इस स्थान से पदच्युत करना चाहते थे। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए ब्राह्मणों को उस कुटिल नीति का अनुकरण करना पड़ा जिसमें परिणाम की ओर देखा ही नहीं जाता। यह अति को प्रचंड से पराजित करने की नीति है। वह यह युद्ध नीति है जिसका उपयोग वामपंथियों को हटाने के लिए सभी दक्षिणपंथी करते हैं। बौद्धों को हटाने का एक ही तरीका था कि उनसे एक कदम आगे जाकर शाकाहारी बन जाएं।

इस मत के समर्थन में एक और प्राण दिया जा सकता है कि ब्राह्मणों ने गो पूजा आरंभ की और गो मांसाहार त्याग कर शाकाहारी बन गए ऐसा बौद्धों को परास्त करने के लिए ही किया। यह वह स्थिति है जब गोवध एक महान पातक बन गया। यह सर्वविदित है कि अशोक ने भी गोवध को एक अपराध नहीं ठहराया था। बहुत से लोग उससे यह आशा रखते थे कि गोवध के लिए उसे आगे बढ़ कर कदम उठाना चाहिए था। प्रोफेसर विन्सर स्मिथ को यह बात आश्चर्यजनक लगती है लेकिन इसमें आश्चर्य की कुछ की बात नहीं है।

बौद्ध धर्म सामान्य रूप से पशु बलि का विरोधी था। उसका गो के लिए ही कोई विशेष आग्रह नहीं था। इसलिए अशोक को इस बात की कोई खास आवश्यकता नहीं थी कि वह गो रक्षा के लिए कानून बनाए। बड़े आश्चर्य की बात है कि गो वध को महापातक घोषित करने वाले गुप्त नरेश हुए जो हिंदू धर्म के बड़े प्रचारक थे, उस हिंदू धर्म के जो यज्ञों के लिए गो वध की अनुज्ञा देता है। डाक्टर भंडारकर का कथन है:–

''हमारे पास इस बात का शिलालेख का अकाट्य प्रमाण है कि पांचवीं शताब्दी के आरंभिक हिस्से में गोवध करना एक भयानक पाप माना जाता था उतना ही भयानक जितना किसी ब्राह्मण को मार देना। हमारे पास 645 ई० का एक ताम्र पत्र है जो कि गुप्त राज वंश के स्कंद गुप्त के राज्यकाल का है। यह एक दान पात्र है जिसके अंतिम श्लोक में लिखा है: ''जो भी इस प्रदत्तदान में हस्तक्षेप करेगा वह गो हत्या, गुरू हत्या अथवा ब्राह्मण हत्या के पाप का भागी होगा। स्कंद गुप्त के पितामह चन्द्रगुप्त द्वितीय का भी एक लेख है जो गो हत्या को ब्रह्म हत्या के ही समान पाप मानता है। इसमें 93 गुप्त संवत्सर दिया गया है। यह 412 ई. के बराबर होता है। मध्यप्रांत के सांची के प्रसिद्ध बौद्ध स्तूप के पश्चिम में खड़ा हुआ है, उसमें चन्द्रगुप्त के एक अधिकारी के दान का भी वर्णन है। इसका अंत इस प्रकार होता है। जो भी इस व्यवस्था को विकृत करेगा उसे गो हत्या, ब्राह्मण हत्या अथवा पंच अनान्तर्य का पाप लगेगा। इस कथन का उद्देश्य है विकृति करने वाला चाहे ब्राह्मण धर्म का अनुयायी हो, चाहे बौद्ध धर्म का, दोनों को भयभीत करना। पांच अनान्तर्य बौद्धों के पांच महापातक हैं। वे हैं मातृ हत्या, पितृ हत्या, अर्हत हत्या, बुद्ध के शरीर का रक्त बहाना, भिक्षु संघ में मतभेद पैदा करना। जिन महापातकों का ब्राह्मण धर्मी को भय दिलाया जाता है वे केवल दो हैं– गो की हत्या और ब्राह्मण की हत्या। ब्राह्मण की हत्या तो स्पष्ट ही है कि महापातक है क्योंकि जितनी भी स्मृतियां हैं सभी में ब्राह्मण हत्या को महापातक कहा गया है, किंतु गो हत्या को आपस्तम्ब, मनु, याज्ञ वल्क्य और दूसरों ने केवल उपपातक ही माना है। किंतु यहां इस ब्रह्म हत्या के साथ जोड़ देने से और दोनों को बौद्धों के अनान्तर्यों के साथ समानता का दर्जा दे दिए जाने से यह स्पष्ट है कि पांचवी शताब्दी के आरंभ में गो हत्या को महापातकों की श्रेणी में सम्मिलित किया गया। इस प्रकार गो हत्या कम से कम एक शती पहले महापातक गिनी जाने लगी होगी अर्थात चौथी शताब्दी के आरंभ में।''

प्रश्न उठता है कि एक हिन्दू नरेश को क्या पड़ी थी कि व गोवध के विरूद्ध अर्थात मनु के नियमों के विरूद्ध नियम बनाता? उत्तर यही है कि ब्राह्मणों के लिए यह अनिवार्य हो गया था कि बौद्ध भिक्षुओं पर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए वे वैदिक धर्म के अपने एक अंश से पिंड छुड़ा ले। यदि हमारा यह विश्लेषण ठीक है तो यह स्पष्ट है कि गो पूजा बौद्ध और ब्राह्मण धर्म के संघर्ष का परिणाम है। यह एक साधन था, जिसका ब्राह्मणों ने अपनी खोई हुई स्थिति को पुनः प्राप्त करने के लिए उपयोग किया।

सामार – बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर
सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड–14, पृष्ठ सं. 99 से 116
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

अछूतों का महत्व

संसार के अधिकांश देशों में ऐसे वर्ग हैं, जो निम्न वर्ग कहे जाते हैं। ये रोम में स्लेव या दास कहलाते थे। स्पार्टन में इनका नाम हेलोटस या क्रीत था। ब्रिटेन में ये विलियन्स या क्षुद्र कहलाते थे, अमरीका में नीग्रो और जर्मनी में ये यहूदी थे। हिंदुओं में यही दशा अछूतों की थी, परंतु इनमें से कोई इतना बदनसीब न था, जितना अभागा अछूत है। दास, क्रीत क्षुद्र सभी लुप्त हो गए हैं। परंतु छुआछूत का भूत आज भी मौजूद है और यह तब तक मौजूद रहेगा जब तक हिंदू धर्म का अस्तित्व है। अछूत यहूदियों से भी गया–बीता है। यहूदियों की दुर्दशा उनकी अपनी करनी के कारण है। अछूतों दुर्गति के कारण नितांत भिन्न है। यह निर्मम हिंदुओं की साजिश के शिकार हैं, जो उनकी दुर्दशा के लिए बर्बर तत्वों से कम नहीं हैं। यहूदी तिरस्कृत है, परंतु उनकी तरक्की के रास्ते बंद नहीं कर दिए गए हैं। अछूत केवल तिरस्कृत ही नहीं हैं, बल्कि उनकी तरक्की के सभी दरवाजे बंद हैं। फिर भी अछूतों की तरफ किसी का ध्यान नहीं गया 6 करोड़ प्राणियों की अनदेखी हो रही है।

भारत में आजादी का जो कोलाहल मचा है, उसमें यदि कोई हेतु है तो वह है अछूतों का हेतु। हिंदुओं और मुसलमानों की लालसा स्वाधीनता की आकांक्षा नहीं है। यह तो सत्ता संघर्ष है, जिसे स्वतंत्रता बताया जा रहा है। इसी कारण मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि किसी दल अथवा किसी संगठन ने अपने आप को अछूतों के प्रति समर्पित नहीं किया। अमरीका साप्ताहिक ''द नेशन'' और इंगलैंड के साप्ताहिक ''स्टेट्समैन'' प्रभावशाली अखबार है। दोनों ही भारतीय स्वतंत्रता के पक्षधर हैं और ये भारत की स्वतंत्रता का दम भरते हैं। जहां तक मैं जानता हूं, किसी ने भी अछूतों की समस्याओं को नहीं उठाया है। दरअसल उनकी स्थिति को कोई स्वतंत्रता प्रेमी प्रकट नहीं सकता। उन्होंने मात्र हिंदू संस्था को ही मान्यता दी है, जो स्वयं को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कहती है। अन्य हिंदू और कोई अन्य यह नहीं जानता कि वास्तव में अछूत क्या है। भारत में हिंदुओं के सिवाय सब जानते हैं कि नाम कुछ भी क्यों न रख लिया गया हो, यह संदेहातीत है कि यह मध्यवर्गीय हिंदुओं की संस्था है, जिसको हिंदु पूंजीपतियों का समर्थन प्राप्त है, जिसका लक्ष्य भारतीयों की स्वतंत्रता नहीं, बल्कि ब्रिटेन के नियंत्रण से मुक्त होना और वह सत्ता प्राप्त कर लेना है, जो इस समय अंग्रेजों की मुट्ठी में है। कांग्रेस जैसी आजादी चाहती है, यदि उसे वह मिल जाती है, तो इसमें कोई संदेह नहीं कि अछूतों का ठीक वही हाल होगा जो अतीत में होता रहा है। अछूतों के प्रति इस अवहेलना के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की भारतीय शाखा बधाई की पात्र है जिसने प्रशांत संबंध संस्थान में मेरा प्रबंध लेख आमंत्रित किया कि मैं इस विषय पर प्रकाश डाल सकूं कि भारत के नए संविधान में अछूतों की स्थिति क्या होगी। मैं स्वीकार करता हूं कि भारत के नए संविधान में अछूतों की स्थिति पर मेरे वक्तव्य का निमंत्रण एक सुखद आश्चर्य है। मुझे इस बात से बहुत प्रसन्नता हुई है कि बहुत से काम हाथ में होने के पश्चात भी मैं यह प्रबंध लिखने के लिए सहमति दे सका हूं।

सामार – बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर
सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड–17, पृष्ठ सं. 3 से 4
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

अंधविश्वास का उन्मूलन

अंधविश्वास के उन्मूलन में पेरियार की भूमिका को पूरी तरह से समझने के लिए, हमें पहले उस जमीनी हकीकत को समझना होगा जिसमें उन्होंने अपना अभियान शुरू किया।

उन दिनों, यदि सब नहीं तो अनेक नीची जाति वाले निपट अनपढ़ थे और शिक्षा पर ब्राह्मणों और कुछ अन्य ऊंची जातियों का एकाधिकार था। जीवन के सभी क्षेत्रों में, समाज अंधविश्वासों से ग्रस्त था। सिर पर चोटी और तन पर धागा लटकाए रहने वाले ब्राह्मणों के हाथों में आध्यात्मिक और सांसारिक दोनों प्रकार की सत्ता थी। लोग उन्हें मानव रूप में भगवान समझते थे और उन्हें इसी तरह संबोधित भी करते थे। लोग अपने तौर–तरीकों में कोई बड़ा या छोटा बदलाव करने के लिए भी ज्योतिषियों और हस्तरेखा शास्त्रियों से परामर्श करते थे।

कुत्ते या बिल्ली का रास्ता काट देना, कौए या गिद्ध का एक विशेष दिशा में उड़ना, बातचीत के बीच किसी विशेष क्षण में छिपकली या घंटे की आवाज सुनाई देना, घर से निकलने पर सबसे पहले कोई विधवा अथवा अकेला ब्राह्मण दिखाई दे जाना– ये सभी अच्छे या बुरे शकुन होते थे। प्रत्येक वर्ष में अशुभ महीने, प्रत्येक महीने में अशुभ दिन, प्रत्येक दिन में अशुभ घंटे होते थे और लोग उस दौरान कोई भी नया काम शुरू करने से डरते थे।

कोई दस वर्ष का ब्राह्मण बालक भी साठ साल के गैर–ब्राह्मण से आराम से इस तरह से बात कर सकता था मानो वह उसका गुलाम हो और उसे तमाम तरह की उपाधियों से विभूषित कर देता था। आबादी के बहुसंख्यक लोग उस अपमान को बिना चूं किए सहन कर लेते थे, क्योंकि वे सब यही मानते थे कि इस तरह बरता जाना उनकी नियति थी। लोगों का विश्वास था कि ब्राह्मण का क्रोध पूरे कुटुंब का नाश कर सकता है और ब्राह्मण को संतुष्ट करना ईश्वर को संतुष्ट करने के बराबर माना जाता था। अधिकांश लोगों के माथे पर तिलक होते थे और वे जन्म और मृत्यु के अवसरों पर होने वाले समारोहों में गाय के मूत्र, मल, दूध, और घी का मिश्रण पीते थे।

इस वातावरण में पेरियार ने तूफान की तरह प्रवेश किया और यह गर्जना की कि बस बहुत हो चुका। जब उन्होंने 1925 में अपना स्वाभिमान आंदोलन शुरू किया, तो उन्होंने यह घोषणा की कि उनका एकमात्र लक्ष्य द्रविड़ समाज को एक ऐसा समाज बनाना है जिसमें स्वाभिमान और बुद्धि हो। उनका कहना था कि उनमें चाहे आवश्यक योग्यता और खूबी नहीं भी हो, तो भी वह यह सेवा करते रहेंगे क्योंकि और कोई इसे अंजाम देने के लिए आगे नहीं आ रहा था। जब कभी वह किसी सभा को संबोधित करने जाते, तो उन्होंने यह नियम बना लिया था कि वह अपने साथ संबंधित मौलिक धर्म ग्रंथ ले जाते थे और लोगों को दिखाते थे कि वह जो कुछ भी कह रहे थे वह उनकी कल्पना की उपज नहीं थी, अपितु वह तो धर्म ग्रंथों में लिखी कथाएं ही दोहरा रहे थे।

पेरियार ने लोगों से कभी यह नहीं कहा कि वह जो कहते हैं वे उस पर विश्वास करें ही, अपितु वह तो लोगों से यह कहते थे कि वे उनकी बात धैर्यपूर्वक सुनें, आराम से उस पर विचार करें और उन्हें यह सही लगे तभी उस पर अमल करें और जो उन्हें असत्य लगे उसे वे निःसंकोच छोड़ दें।

पेरियार को यह समझ में आ गया कि तमिलनाडु के पूर्व सुधारक बल्लालार इसलिए असफल हो गए क्योंकि उन्होंने ईश्वर की अवधारणा को तोड़े बिना समाज को बदलने का प्रयास किया और बौद्ध धर्म (जो अनीश्वरवादी नहीं तो नास्तिकवादी अवधारणा तो थी ही) का पतन इसलिए हो गया क्योंकि इसमें ब्राह्मणों को प्रवेश दे दिया गया जिन्होंने बाद में बुद्ध को लेकर अनेक अंधविश्वासी कहानियां गढ़ दीं, इसलिए पेरियार ने यह तय कर लिया कि वह ईश्वर और ब्राह्मण दोनों को अपने आंदोलन से बाहर फेंक देंगे और यह घोषणा कर दी कि वह सुधारक नहीं, क्रांतिकारी थे।

बुद्ध और अतीत के अन्य महान चिंतकों के विषय में बोलते हुए, पेरियार कहा करते थे कि कोई व्यक्ति कितना भी महान क्यों न रहा हो, उसका ज्ञान सीमित ही था। उसका अंधानुसरण करना एक और तरह का अंधविश्वास होगा।

पेरियार एक समर्थ वक्ता भी थे और धुआंधर लेखक भी। उनके भाषण और लेख धार्मिकों के खेमे में तहलका मचा देते थे। लगभग आधी शताब्दी तक, पूरे वर्ष वह भ्रमण पर रहते और केवल अपने ही नहीं अपितु उत्तरी राज्यों में और दक्षिण पूर्ण एशिया के कुछ देशों में भी उन्होंने लोगों को संबोधित किया।

वह समझाते थे कि धार्मिक होना एक निजी मामला था और नैतिक होना एक सार्वजनिक मामला क्योंकि अधार्मिक व्यक्ति किसी भी प्रकार से समाज को हानि नहीं पहुंचाता, जबकि एक अनैतिक व्यक्ति अपने स्वभाव के कारण निश्चय ही हर संभव तरीके से ऐसा करेगा ही। उन्होंने यह भी बताया कि कोई भी धर्म अपने अनुयायियों से नैतिक आचरण का आग्रह नहीं करता, अपितु केवल अप्रत्यक्ष आज्ञाकारिता और निष्ठा की मांग करता है। पेरियार ने आत्म–त्याग, मानवीयता और महिलाओं को बराबरी का दर्जा देने का प्रचार किया और स्वयं भी उस पर अमल किया।

उनका अनीश्वरवादी चिंतन भी ईश्वर को नकारने से इतना नहीं अपितु मानवता में उनके विश्वास से अधिक प्रेरित था, क्योंकि उन्होंने देखा था कि देवत्व में विश्वास ही मनुष्य जाति की प्रगति की मुख्य बाधा थी। उन्होंने जब यह समझ लिया कि कालांतर में शिक्षा ही अंधविश्वास के उन्मूलन में सहायक होगी, तो उन्होंने शिक्षण संस्थाओं में पिछड़ी और अनुसूचित जातियों के आरक्षण की लड़ाई लड़ी और उसे जीता भी। उनकी दृष्टि में, प्रार्थना एक सम्माननीय किस्म का भिक्षाटन ही है जिसका कारण लालच होता है।

अनेकानेक उदाहरण देकर, उन्होंने लोगों को यह समझाया कि स्वास्थ्य और बीमारी, जन्म और मृत्यु, अमीरी और गरीबी पूजा करने वालों के जीवन में भी आती है और नास्तिकों के जीवन में भी। एक बार एक मुसलमान से बातचीत के दौरान, पेरियार ने उससे पूछ लिया कि क्या वह हिंदूओं और ईसाइयों के ईश्वरों में भी विश्वास करता है। उस मुसलमान ने 'नहीं' में जवाब देते हुए कहा कि वह केवल अल्लाह में विश्वास करता है। इस पर पेरियार बोले कि वह उससे केवल एक बात में उससे भिन्न थे कि वह अल्लाह में भी विश्वास नहीं करते।

जो व्यक्ति यह विश्वास करता है कि उसे प्रार्थना करने से मनचाही वस्तु मिल जाएगी चाहे वह उसके लिए उचित काम नहीं भी करे, ऐसे व्यक्ति की तुलना वह उस व्यक्ति से करते थे जो जमीन को जोतता नहीं, उसमें बीज नहीं बोता और उसे सींचता नहीं और हंसिया लेकर फसल काटने पहुंच जाता है। वह जब अंधविश्वासों पर प्रहार करते थे तो एक नहीं अनेक कोणों से प्रहार करते थे। उदाहरण के लिए, जब उन्होंने भारत के लोक पर्व दीपावली पर प्रहार करना शुरू किया, तो उन्होंने इस उत्सव के पीछे की प्रामाणिक पौराणिक कथा का वर्णन किया जो मूर्खतापूर्ण भी थी और अश्लील भी और ऐसे उत्सवों के आर्थिक निहितार्थ को भी स्पष्ट किया और यह भी बताया कि इसमें समय, ऊर्जा और स्वास्थ्य की कितनी बर्बादी होती है, जिनका सदुपयोग इस धरती पर जीवन की बेहतरी के लिए किया जाना चाहिए था।

वह किसी भी मकसद के लिए किए जाने वाले उपवास के कट्टर विरोधी थे क्योंकि धार्मिक लोग जब कभी उपवास का प्रबंध करते तो उसका मतलब एक विशेष मकसद के लिए 'दावत उड़ाना' होता था। उदाहरण के लिए, जब धार्मिक समूह ने गौ हत्या के विरोध में उपवास का आयोजन किया, तो पेरियार ने दावत का आयोजन किया जिसमें सभी को गोमांस खिलाया गया। यह उनके कामों का ही फल था कि घृणित देववासी प्रथा का अंत हुआ (जिसमें गरीब घरों की कमसिन कन्याओं का विवाह देवों से करा दिया जाता था और जो बाद में पुजारियों और जमींदारों की रखैलें बन जाती थी और उसके बाद वेश्या हो जाती थीं)।

जब डॉ. बी. आर. आंबेडकर ने पेरियार से कहा कि उनके साथ वह भी बौद्ध धर्म अपना लें, तो पेरियार ने उनकी बात नहीं मानी, अपितु यह कहा कि वह ऐसा नहीं करें क्योंकि हिंदू धर्म में रहते हुए ही उन्हें इसकी आलोचना का अधिकार होगा और वे जनसाधारण को शिक्षित कर सकेंगे। जनता को यह दिखाने के लिए कि देवताओं की मूर्तियों में कुछ भी दैवीय नहीं होता, उन्होंने और उनके अनुयायियों ने गजमुखी दैत्य गणेश की हजारों मूर्तियों को तोड़ डाला। यह वही गणेश थे जिन्होंने हाल ही में पूरे संसार में एक ही दिन, एक ही समय में कथित तौर पर दूध पिया था।

यहां यह याद रखना होगा कि इनमें से एक भी मूर्ति सार्वजनिक संपत्ति नहीं थी और सारी मूर्तियां पेरियार के अनुयायियों ने अपने पैसों से खरीदी थीं। अब नास्तिकों के इस नैतिक कार्य की तुलना उन लोगों के हाथों हाल में बाबरी मस्जिद के विध्वंस से कीजिए जो यह मानते और कहते हैं कि सभी धर्म एक ही ईश्वर की ओर ले जाते हैं। रामायण की रचना ब्राह्मणों की श्रेष्ठता को महिमामंडित करने के लिए की गई थी, यह दिखाने के लिए पेरियार ने एक जुलूस का आयोजन किया जिसमें राम की मूर्ति को लगातार चप्पल–जूतों और झाडुओं से पीटा गया और बाद में सार्वजनिक तौर पर जला दिया गया।

पेरियार अपनी इस बात को सही सिद्ध करने के लिए सार्वजनिक बहसों का भी आयोजन करते थे कि रामायण अश्लील और पतनकारी है और इसलिए सार्वजनिक तौर को इस तथाकथित धर्मग्रंथ की अश्लीलता और उसके असली रूप को समझने में मदद मिलती थी। लोगों को शिक्षित करने के अपने प्रयास में, उन्होंने कोई कसर नहीं छोड़ी।

उनके पास प्रत्येक पर्व और प्रत्येक देवता के विषय

में बताने को मौलिक किस्से थे, प्रत्येक चमत्कार के विषय में सांसारिक व्याख्याएं और प्रदर्शन थे, प्रत्येक तर्क के उत्तर में उनके पास वैध और अकाट्य प्रति–तर्क थे। यदि ईश्वर सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है, तो या तो ईश्वर को मनुष्य की इच्छाओं के अनुसार कार्य करना चाहिए या फिर उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मनुष्य उसकी इच्छा के विरूद्ध कोई इच्छा नहीं करें जो आस्तिक प्रतिदिन अपनी दाढ़ी बनाता है और जो ईश्वर वहां प्रतिदिन बाल उगने को कहता है, यह एक मूर्खतापूर्ण द्वंद्व है और इससे उन दोनों का ही भंडाफोड़ होता है।

जब तक संसार में ब्राह्मण शब्द है, तब तक प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से घृणित शूद्र शब्द रहेगा। इसलिए पेरियार अपने अनुयायियों से कहते थे कि होटलों और लॉज में लगे सभी नाम पट्टों से ब्राह्मण शब्द मिटा दें। उन्होंने गैर–ब्राह्मणों के साथ मंदिरों के गर्भ में घुसने के लिए एक आंदोलन की भी योजना बनाई जिससे मंदिरों में ब्राह्मणों का एकाधिकार समाप्त हो और शूद्र होने का अपमान भी मिटे।

जब भारत सरकार ने जनता के साथ धोखा करते हुए धर्म निरपेक्ष शब्द का अर्थ सभी धर्मों में समान आस्था कर दिया, तो पेरियार ने कहा कि तब तो कुआंरी कन्या का अर्थ होगा ऐसी लड़की जो सभी पुरूषों को समान अवसर दें। जब उनसे आग पर चलने के चमत्कार के बारे में कहा गया, तो उन्होंने सवाल किया कि चमत्कार की शक्ति से लोग आग पर खड़े क्यों नहीं जाते, या वे एक दहकते लोहे की छड़ को पकड़कर अपनी शक्ति क्यों नहीं दिखाते।

आस्तिकों को लज्जित और शिक्षित करने लिए, पेरियार ने अपने अनुयायियों से कहा कि वे उन विश्वासियों से भी अधिक दूरी तक चलकर दिखाएं और यह कहते जाएं कि कोई ईश्वर है ही नहीं। जब उनसे साई बाबा के बारे में सवाल किया गया कि वह कैसे हवा में से चीजें पैदा कर देते हैं तो उन्होंने कहा कि ऐसी सभी चीजें इतनी छोटी होती हैं कि उन्हें आसानी से हथेली में छिपाया जा सकता है और इस धर्मगुरू को चुनौती दी कि वह कद्दू या हाथी पैदा करके दिखाएं।

जो लोग राहुकालम् ओर यमकंडम् की अशुभ घड़ियों से चिंतित होते थे, उनसे पेरियार का सवाल होता था कि क्या कोई व्यक्ति किसी अशुभ घड़ी में जज के बुलाने पर कचहरी में गवाही के लिए हाजिर होने से रूक जाएगा। ज्योतिषियों से उनका सवाल था कि वे किसी अंतरिक्ष यान में जन्म लेने वाले बच्चे के भविष्य की गणना कैसे करेंगे, क्योंकि तब उन्हें पृथ्वी ग्रह का भी ध्यान रखना होगा।

भौतिक शरीर से अलग कोई आत्मा नहीं होती, यह समझाने के लिए उन्होंने भौतिकवाद पर एक पुस्तक लिखी और साधारण जन को इस सत्य के बारे में समझाया। उनका कहना था कि यदि कोई यह विश्वास करता है कि शारीरिक क्रियाओं को समझाने के लिए आत्मा की अवधारणा की आवश्यकता होती है, तो एक घड़ी, मोटर और रेडियो को भी काम करने के लिए आत्मा की आवश्यकता होगी।

आत्मा के सिद्धांत को एक ही बार में धराशायी करके, पेरियार ने आत्मा के साथ जुड़े पूर्वजन्म, अगला जन्म, ज्योतिष, अंतिम संस्कार, स्वर्ग और नर्क और देवता और राक्षस जैसे सभी अंधविश्वासों पर घातक प्रहार किया। उन्होंने एक ओर स्वर्ग–नर्क और दूसरी ओर पुनर्जन्म होने के घोर अंतर्विरोध को लोगों के समक्ष उजागर किया। उनका सवाल था कि यदि पनुर्जन्म का कारण पूर्व जन्म के अच्छे और बुरे कर्म होते हैं, तो फिर स्वर्ग और नर्क किसलिए है? यदि ईश्वर सर्वशक्तिमान है, तो फिर मंदिर में ताला लगाने की क्या जरूरत है?

यदि ईश्वर प्रेम का साक्षात रूप है, तो फिर उसके हाथों में इतने सारे हथियार क्यों रहते हैं? एक प्रेम करने वाला ईश्वर दूसरों को नर्क में कष्ट उठाते कैसे सहन कर सकता है? यदि हमारे देश में सरस्वती वास्तव में शिक्षा की देवी है जहां कागज के टुकड़ों को भी पवित्र माना जाता है, जो सरस्वती अर्थात कागज को गुदा साफ करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है, वहां इतने अधिक पढ़े–लिखे लोग क्यों हैं?

यदि, जैसा कि विश्वास किया जाता है, सरस्वती का निवास ब्रह्मा के मुंह में हैं, तो वह मल–मूत्र त्याग कहां करती है? जब हमारे देश में नियम से आयुध (हथियारों की) पूजा होती है, तो मुसलमानों और अंग्रेजो ने इसे इतनी शताब्दियों तक गुलाम कैसे बनाए रखा? विष्णु के सारे अवतार अकेले भारत में ही क्यों हुए? कोई ऐसे ईश्वर की पूजा क्यों करे जो अपने पास केवल ब्राह्मणों को आने देता है और केवल संस्कृत भाषा सुनता है?

प्रत्येक व्यक्ति मंदिरों के गर्भगृह में प्रवेश क्यों नहीं कर सकता जहां मक्खी, मच्छर, चूहे और चमगादड़े आजादी से घूमती–फिरती हैं? जब ब्राह्मणों की गलियों में कुत्ते और सुअर घूम सकते हैं, तो अछूत क्यों नहीं?

यदि ब्राह्मण मंत्रो का जाप करके एक पत्थर को भगवान बना सकता है, तो उसी मंत्र से किसी अछूत को भगवान क्यों नहीं बनाया जा सकता? यदि अग्नि एक देवता है, तो आग लग जाने पर लोग आग–आग क्यों चिल्लाते हैं? यदि बच्चा ईश्वर का उपहार होता है, तो क्या कोई पुरूष ऐसी स्थिति में अपनी पत्नी से जन्मे बच्चे को अपना लेगा जबकि उसका अपनी पत्नी से पहले सहवास ही नहीं हुआ?

इन और ऐसे ही अन्य विचारोत्तेजक प्रश्नों ने लोगों को सोचने को बाध्य कर दिया था। उनकी आसान भाषा, व्यावहारिक उदाहरणों, निष्ठापूर्ण प्रयास, साहस और सत्यता ने जल्दी ही लोगों का मन जीत लिया। शुरू–शुरू में तो धार्मिक पाखंडियों ने उन्हें सताया, किंतु जल्दी ही उन्हें अत्यधिक धार्मिक व्यक्तियों का भी सहयोग मिलने लगा। उनकी विनम्रता तो किसी भी आंदोलन के किभी भी नेता के लिए अनुकरणीय है। उनका चरित्र इतना निष्कलंक था कि ताकतवर शत्रु भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ पाए और उन्हें पूजनीय मानने लगे।

उन्हें देखने मात्र से ही उनके प्रति सम्मान का भाव जाग्रत होता था और लोगों ने उनके प्रति अपना प्रेम और आदर व्यक्त करने के लिए उनकी प्रत्येक सभा में उन्हें दान देना शुरू कर दिया। अपने प्रिय आदर्शों के प्रचार–प्रसार के लिए एक न्यास (ट्रस्ट) बनाने के खातिर, वह जितना बचा सकते थे उन्होंने बचाया, यहां तक कि उन्हें कंजूस भी कहा गया।

मानवता के प्रति उनकी सेवा का सम्मान करते हुए, यूनेस्को ने 1970 में उनका अभिनंदन किया और उन्हें एक प्रशस्ति पत्र दिया जिसमें लिखा था : पेरियार, नए युग के भविष्यदृष्टा, दक्षिण पूर्व एशिया के सुकरात, सुधार आंदोलन के जनक और अज्ञान, अंधविश्वासों अर्थहीन प्रथाओं और आचरणों के कट्टर शत्रु।

सामार :
के. राज शेखर
पेरियार महान संकलन और संपादन शीलप्रिय बौद्ध
पृ.सं. 106 से 110 तक।

समाधान

इस प्रकार द्रविड़ों की समस्या को हमने संक्षेप में विवेचन किया इसका समाधान क्या है उसे हमें मिलकर खोजना चाहिए। द्रविड़ों की समस्या का मूल वही है जो आदिवासी और अछूतों की समस्या का है क्योंकि जगह जगह मैं विवेचन करता आया हूँ कि दक्षिण के द्रविड़ उत्तर के शूद्र अछूत बन पर्वत कन्दरा और दुर्गम स्थानों के आदिवासी एक ही रक्त वंश की सन्तान हैं। सभी ब्राह्मण प्रधान आर्य संस्कृति की शोषक प्रवृत्ति के शिकार हैं। वे सब एक साथ पराजित हुए थे। जो दक्षिण को चले गये वे द्रविड़ कहलाये, यहां आर्य परम्परा में जो सामिल हुए वे शूद्र और जो बन पर्वत कन्दराओं में चले गये वे आदिवासी। इस सब की समस्या एक जैसी है। किन्तु उत्तर और दक्षिण की समस्याओं में कुछ भिन्नता है। दक्षिण का द्रविड़ अछूत नहीं रहा जबकि उत्तर का शूद्र अछूत है। दक्षिण की समस्या के सुधार के लिए निम्न बातें आवश्यक हैं। (1) तमिल भाषा उत्तर वासी अनिवार्य रूप से पढ़ें ताकि उत्तर दक्षिण में सोहार्द बढ़े (2) उत्तरवासी आर्य राम लीलाएं करना और रावण के पुलते जलाना बन्द करें (3) ब्राह्मण अपनी पूजा की तमन्ना न करें (4) राम को भगवान की संज्ञा दक्षिण से हटा दें। आर्य संस्कृति के ग्रन्थों की ओवर हालिग करें और अन्धविश्वास अतिशयोक्ति और ऊंच नीच की भावना पैदा करने वाले अंश निकाल दें। उन पुस्तकों को जप्त कर लें उत्तर वासी द्रविड़ों को समान दर्जा दें। केन्द्र सरकार राज्य सरकार की स्वयत्तता सौंप दें। जब तक ये बातें नहीं हो जाती तब तक एकता नहीं हो सकती। भारत सरकार स्वायत्तता नहीं मानती तब तक संघर्ष जारी रहेगा। और उसका परिणाम विघटन होगा। जो एक प्रथक विधान, प्रथक भूखण्ड और प्रथक सरकार के रूप में असतित्व में आयेगा।

के रूप में असतित्व में आयेगा।

संज्ञा दक्षिण से हटा दें। आर्य संस्कृति के ग्रन्थों की ओवर हालिग करें और अन्धविश्वास अतिशयोक्ति और ऊंच नीच की भावना पैदा करने वाले अंश निकाल दें। उन पुस्तकों को जप्त कर लें उत्तर वासी द्रविड़ों को समान दर्जा दें। केन्द्र सरकार राज्य सरकार की स्वयत्तता सौंप दें। जब तक ये बातें नहीं हो जाती तब तक एकता नहीं हो सकती। भारत सरकार स्वायत्तता नहीं मानती तब तक संघर्ष जारी रहेगा। और उसका परिणाम विघटन होगा। जो एक प्रथक विधान, प्रथक भूखण्ड और प्रथक सरकार के रूप में असतित्व में आयेगा।

सामार :
द्रविड़ और द्रविड़ स्थान
पृ.सं. 34 से 44 तक।

सेवा में,

नाम श्री..

पता ....

....

....

होलिका दहन

फागुन महीने की पूर्णिमा को यह त्यौहार मनाया जाता है। इस अवसर पर लकड़ी घास फूँस का बड़ा ढेर लगाकर एक भड्डरी या ब्राह्मण के द्वारा आग लगाई जाती है। यज्ञ भी इसी दिन किया जाता है। बुहत कीमती पकवान बनाए जाते हैं। रंग गुलाल की रंगाई होती है शराब भंग पी जाती है और स्त्रियों के साथ नाँच रंग होता है। होली रात्रि में सूर्योदय से पहले जलाई जाती हैं। होली कथा भविष्य पुराण में आई है। नारद राजा युधिष्ठर को होली की कथा सुनाते हैं कि हिरण्य कश्यप की बहन और प्रहलाद की बुआ होलिका को आग में डालकर जला दिया गया था इसी दिन होली जलाई जाती है। राक्षस की बहिन ही हत्या की खुशी में नाँच रंग अबीर गुलाल डालकर होली मनाई जाती है। कथा में आया है कि हिरण्य कश्यप राक्षसों का राजा था और आर्यों का घोर विरोधी था। आर्य इन देवताओं के नाम पर निरपराध पशुओं की बलि देकर हिंसा करते थे। उसने अपने राज्य में पशु बलि बन्द करा दी और हत्यारे आर्य ब्राह्मणों को जेल में डाल दिया। ब्रह्मा विष्णु की पूजा पर प्रतिबन्ध लगा दिया और इनका नाम लेने और ब्राह्मण के पाखण्ड पर दण्ड देने लगा। इसके भय से ब्राह्मण और उनके देव विष्णु ने मिलकर हिरण्य कश्यप के वध करने की योजना बनाई और कपटी वेष बनाकर विष्णु ने नकली शेर की खाल ओढ़कर खम्भे से छिपकर उस अनार्य राजा को मार डाला। प्रहलाद जो उनका लड़का था उसे बरगला कर अपनी ओर मिला लिया। कुटुम्ब द्रौही प्रहलाद अपनी बुआ को धोखा देकर ले गया और आर्यों द्वारा उसे आग में जलवा दिया और स्वयं बच गया।

विधि विधान : फागुन पूर्णिमा के व्यतीत होने पर सुबह पहर में होली जलाई जाती है। उससे एक पक्ष पूर्व होली रखी जाती है लकड़ी कण्डे इकट्ठे किए जाते हैं और पूर्णमासी को जला दिए जाते हैं। परिवा के दिन नाच रंग होता है अबीर गुलाल से होली खेलते हैं घरों मे अच्छे पकवान बनाते हैं और स्त्री पुरूष सभी नशे में धुत होकर रिश्ते नाते बंधन टूट जात हैं लज्जा खूटी पर रख दी जाती है और खुलकर हँसी मजाक होता है ससुर बहू को बहू ससुर को देवर भाभी को जेठ छोटी भाभी से खूब विनोद मनाते है। हिन्दुओं की घोर अश्लीलता का यह त्यौहार है अगर इस अवसर पर कोई हिन्दू परदा को रिश्ते वाल स्त्री से भी भोग कर बैठे तो कोई दण्ड की व्यवस्था नही है। परिवा के दिन हिन्दू होली की परिक्रमा कर अक्षत डालते हैं और ढोलक मंजीरों के साथ गाते बजाते हैं। पूर्णिमा के दिन रात्रि में सब लोग इकट्ठे होते हैं और होली के पास उत्तर या पूरब की ओर मुँह करके बैठते हैं फिर एक ब्राह्मण द्वारा होली में आग लगाई जाती है कुँवारी हिन्दू कन्याएँ रात में ही जाती हैं। थाली में भोजन और दान ले जाती हैं और होली का पूजन कर वह भोजन दान ब्राह्मण को देती है। गेहूँ, जौ, चना की बालें भूनी जाती हैं। ब्राह्मणों को दान दिया जाता है। राक्षस दमन की खुशी में सभी हिन्दू एक – दूसरे के गले मिलते हैं। गाँजा भांग शराब छक कर पिए जाते हैं।

उद्देश्य एवं रहस्य : यह आर्य और अनार्य के संघर्ष की एक खून भरी कहानी है। हिरण्य कश्यप अनार्य आदिवासी राजा था जिनके वंशज आज शूद्र हैं राजा कश्यप को शेर की खाल ओढ़कर मुँह छिपाकर मारा था ताकि पहचाने न जा सके और कश्यप का लड़का प्रहलाद भी न जान सके कि जो लोग उससे मिले हैं उन्हीं ने उसके पिता की हत्या कर दी है। नरसिंह अवतार की कहानी महज शूद्रों के विद्रोह को रोकने की नियत से गढ़ी गई है जो मनगढ़ंत है। राजा हिरण्य कश्यप के राज्यकाल के समय की समस्त पुस्तके और साहित्य को जला डाला गया बाद में प्रहलाद को भी मार डाला गया। जिस समय आर्यों ने यह विद्रोह अनार्य राजा के विरुद्ध कथा और शूद्र राजा को मार डाला तो अनार्य शूद्र जाति की स्त्रियों के साथ सामूहिक बलात्कार किया और उसी की परम्परा में भी समाज के सवर्ण ठेकेदार दलाल गरीबों दलितों की माँ बहनों की इज्जत के साथ खेलते और होली के हुड़दंग के नाम पर इन्हें अपनी हविश का शिकार बनाते हैं। हर साल पर्व के नाम पर रंग, गुलाल लेकर इनके घरों में इनकी स्त्रियों के पास पहुँच जाते है। कितनी विडम्बना है कि सैकड़ों वर्षो से इस दलित शूद्र जाति ने हिन्दुओं के इस अत्याचार को हँसकर स्वीकारा है। उसने यह भी न सोचा कि यह उसी के राजा और उसी के वंश के विनाश के यादगार की कहानी होली का पर्व है और आज के दिन सवर्ण हिन्दुओं को जो महिलाओं से मिलने की छूट मिल जाती है उसी के फलस्वरूप वह हिन्दू उस शूद्र की स्त्रियों के साथ सालों भी बलात्कार जैसे कु कर्म करता रहता है।

होली के त्यौहार पर गले मिलकर रंजिश भेद भाव मिटाने का नाटक रचा जाता है। इसका अर्थ है कि सारे वर्ष जुल्म अत्याचार हत्या लूट ये सवर्ण हिन्दू करता है और शूद्र इन अपराधों का शिकार होता है। इस अवसर पर सवर्ण हिन्दू यह गले मिलकर अपने ऊपर किए गए कुकर्म अपराधों को भूल जाने की सलाह देता है। ताकि शूद्र उससे बदला न लें और अपनी पीड़ा भूल जाये।

इस त्यौहार पर ब्राह्मणों की पौ बारह होती है। भोजन दान हफ्तों चलता है। झोली भर–भर कर दान दिया जाता है। हाथी, घोड़ा, गाय, अन्न, सोना, चाँदी, बर्तन जो जैसा दान दे पाता है। ब्राह्मणों को दान देता है। यह ब्राह्मण की स्वार्थ पूजा का त्यौहार है बाजार से करोड़ों रुपए की घी, तेल, अबीर, गुलाल, रंग पिचकारी आदि सामग्री खरीद कर खर्च कर दी जाती है इससे गरीब पर कर्ज बढ़ता और बनियों के घर बनते हैं गरीब गरीब कर्ज लेकर खर्च करता है और वैश्य वर्ण चौगुने लाभ पर बेचता है। यह शूद्रों की बरबादी का त्यौहार है।

वास्तविकता यह है कि होली शूद्रों पर अत्याचार की यादगार है। शूद्र इसे भूल जाएँ और अपने ही राजा और राज महिला होलिका की हत्या भूलकर उन्हें ही पापी अत्याचारी समझने लगें। यह त्यौहार उसी षड्यन्त्र की कड़ी है, इस प्रकार यह त्यौहार शूद्र जाति के लिए अपमान शेषण दमन और अत्याचार की कहानी है। इसे शूद्रो को नहीं मनाना चाहिए।

साभार :
हिन्दुओं के व्रत–पर्व और त्यौहार
एस.एल. सागर

बहुजन नायक मान्यवर कांशीराम जी के कुछ प्रेरक विचार ....

तमन्ना सच्ची है, तो रास्ते मिल जाते हैं।
तमन्ना झूठी है, तो बहाने मिल जाते हैं।।
जिसकी जरूरत है रास्ते उसी को खोजने होंगे।
निर्धनों का धन उनका अपना संगठन है।

चाहने वालों की चाहत को पूरा करने के लिए, चाहने वालों को ही साधन खोजने होंगे। छोटे साधन को बड़े पैमाने पर इस्तेमाल करके बड़े से बड़े लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

बहुजन समाज पार्टी बनाना आसान काम है, परन्तु बहुजन समाज बनाना मुश्किल काम है। मैं इस मुश्किल काम को अंजाम देने में लगा हूँ, मैंने मांगने वाले लोगों में देने की आदत डाल दी है।

अकेले एक जाति का संगठन बनाकर, उस जाति के हितों की सुरक्षा नहीं की जा सकती बल्कि छः हजार जातियों में तोड़े गये लोगों को जोड़कर भाईचारा पैदा करके बहुजन समाज बनाकर सभी जातियों के हितों की रक्षा की जा सकती है।

15 मार्च

मान्य. कांशीराम के जन्म दिन के महान अवसर पर उन्हे

हार्दिक श्रृद्धांजलि

श्रीमती
उमेश्वरी देवी
पूर्व ग्राम प्रधान/सम्पादक
द्रविड़ भारत

मा. रामदीन अहिरवार
पूर्व ग्राम प्रधान/पूर्व जेल विजिटर
उ.प्र. शासन